International Research Journal of Human Resource and Social Sciences
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
Impact Factor 6.924 Volume 9, Issue 04, Apri 2022
Website- www.aarf.asia, Email : editoraarf@gmail.com

हिंदू-समाज : ववाह संस्कार का परिवर्तित रूप

डॉ॰ अर्चना गौड़
एसो सएट प्रोफ़ेसर,
हिंदी वभाग, रामलाल आनंद कॉलेज
दिल्ली वश्व वद्यालय

हिंदू समाज में ववाह एक धा र्मक अनुष्ठान माना जाता है। हवन, यज्ञ, पूजन आदि का पूर्ण-अनुष्ठान पुरुष अपनी अर्द्धा गनी के साथ संपन्न करता है। रामायण में भी राम के द्वारा सीता का परित्याग कर देने के पश्चात् अश्वमेघ यज्ञ में सीता की सोने की प्रतिमा को बाम अंग रखकर यज्ञ का संस्कार पूर्ण कया गया। अतः धा र्मक अनुष्ठानों में सहभा गनी का होना अनिवार्य है। भारतीय संस्कृति के इस तथ्य को उजागर करते हुए डॉ॰ महेन्द्रनाथ श्रीवास्तव ने ठीक ही कहा है -"गृहस्थ आश्रम में व्यक्ति ववाह का सर्वप्रथम अपनी पत्नी के साथ धा र्मक क्रयाओं का संपादन करता है। बिना ववाह के अनेक धा र्मक अनुष्ठान यज्ञ आदि पूरे नहीं होते।"[i]

स्त्री-पुरुष के संबंध में यौन मनो वज्ञान का बहुत महत्त्व है। भारतीय व पाश्चात्य दोनों मनोवैज्ञानिक इस बात से सहमत है क यौन-तृप्ति न होने पर मनुष्य के मन में अनेक प्रकार की कुठाएँ व तनाव घर कर लेते हैं। फ्रायड तो संपूर्ण कार्य के पीछे 'काम-प्रेरणा' को ही मूल मानते है चाहे वह " चत्रकार की चत्रकारी हो, तपस्वी की तपस्या हो, क व की क वता हो।"[ii]

इस प्रकार स्त्री-पुरुष एक-दूसरे के पूरक हैं उन्हें परस्पर एक-दूसरे की आवश्यकता ठीक उसी प्रकार अनुभव होती है जैसी आवश्यकता एक पंगु को बैसाखी की। अपने परिवार को बनाये रखने के लए, धा र्मक अनुष्ठानों को पूरा करने के लए, काम-प्रवृत्ति के लए, आ र्थक रूप से जीवन यापन के लए दोनों को ही एक-दूसरे की अनिवार्य आवश्यकता है। अपने इन संबंधों को मर्यादित रखने के लए स्त्री-पुरुष समाज की स्वीकृति के साथ ववाह बंधन में बंधते है।

ववाह को परिवार और समाज का एक आवश्यक कृत्य माना गया है। भारतीय मनी षयों ने सोलह संस्कर माने हैं जिनमें से ववाह भी एक है, जो क उनकी दृष्टि से जन्म-जन्मांतर का बंधन है। यह मात्र दो व्यक्तियों का आपसी समझौता नहीं है, वरन् दो आत्माओं का मलन है। नवीन दृष्टि वाले वद्वान यह मानते हैं क मनुष्यों को यौन जीवन पहले न व्यवस्थित था, न ही नियंत्रित। राहुल सांस्कृत्यायन ने 'वोल्गा से गंगा' में ऐसे

अनियंत्रित संबंधों पर प्रकाश डाला है। प्रागैतिहा सक समय के व र्णत मनुष्यों व पशुओं में कसी प्रकार का अंतर नहीं दिखाया गया है। अतः समाज में यौन जीवन को नियंत्रित एवं मर्यादित करने के लए ववाह की आवश्यकता समझी गयी। हमारे यहाँ के प्राचीन ऋ षयों में से सामान्यतः सभी ववाह करने वाले थे। व सष्ठ-अरुन्धती, अत्रि-अनुसूया, मनु-शतस्पा, कश्यप-अदिति, याज्ञवल्क्य-मैत्रेयी जैसे अनेक जोड़े प्राचीन ऋ षयों की वैवाहिक मान्यता के द्योतक है।

पश्चिमी मनोवैज्ञानिकों ने ववाह को यौनतुष्टि का साधन माना है। परिवार के लए, परिवार की वृ द्ध के लए ववाह की आवश्यकता को भी सराहा गया है। दृष्टिकोण की भन्नता हो सकती है। भारतीय दृष्टि तो यह थी क मनुष्य गृहस्थ आश्रम में प्रवेश इस लए करता है क्यों क उसे संतान उत्पन्न करनी होती है। का लदास ने रघुवंश में पूर्वजों के वर्णन में लखा है क वे संतान के लए गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करते थे।[iii]

भारतीय संस्कृति में पुत्रैच्छा का बहुत महत्त्व माना गया है। पुत्र न होने पर पुत्र की बलवती स्पृहा का अंकन का लदास ने दुष्यन्त के द्वारा अपने अ भज्ञान शाकुन्तलम् नाटक में कराया है। उनकी बात यहाँ पर द्रष्टव्य है -

आलच्यदन्त मुकुलानि मत्तहासै
रव्यक्तवर्णरमणीयवचः प्रवृत्तीन्।
अङ्कश्रयप्रणयिनस्तनयान्वहन्तो
धन्यास्तदङ्गरजसा कलुषी भवन्ति।।"[iv]

अर्थात् बिना कारण हंसने से जिनके दांतों की पंक्ति कुछ-कुछ वक सत हो रही है और जो अव्यक्त अक्षरों से मनोहर वाणी को (तोतली बोली) बोलते हैं, और जो गोद में बैठने को उत्सुक हो रहे हैं, ऐसे पुत्रों को गोद में बैठा कर उनके अंग में लगी हुई धू ल से धन्य एवं पुण्यात्मा लोग ही म लन और धू ल धूसरित होते है।

समाजशास्त्र के वद्वानों ने अपने वचार इस दृष्टि से आगे बढ़ाये है। ववाह के मूल में संतान की और परिवार की बढ़ोत्तरी के साथ-साथ पुरुष और स्त्री की एक सूत्र में बंधने की स्थिति और मज़बूत हो जाती है। समाज दर्शन पर वचार करते हुए डॉ॰ अशोक कुमार वर्मा ने स्पष्ट शब्दों में स्वीकार कया है - "संतान प्रजनन और परिवार स्था पत करने की स्वीकृत पद्धति ही ववाह है। ववाह में यथासंभव पुरुष और स्त्री स्थायी समय से एक सूत्र में बंध जाते हैं।"[v]

आधुनिक युग में ववाह की स्थिति पर व्यावहारिक दृष्टि से वचार कया गया है। ववाह के द्वारा पति-पत्नी के साहचर्य की मधुरता प्रेम को प्रखर करती है जो क जीवन के लए आवश्यक भी है। मनुष्य की यौन-पीपासा की संतुष्टि के साथ-साथ समाज की शांति और उदात्तता की भी स्थिति सुधरती है।

© **Associationof Academic Researchers and Faculties (AARF)**
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

वैवाहिक दृष्टिकोण में बदलाव

 ववाह-सूत्र में बंधने की प्र क्रया में समयानुसार बदलाव आता रहा है। माता- पता की पसंद, स्त्री की पसंद, पुरुष की पसंद, संबं धयों की पसंद से ववाह होने के उदाहरण सदैव देखने में आते हैं। उस प्र क्रया में और उस समय की दृढ़ता में लचीलापन आ गया है।

वर्तमान परिस्थिति में एक-दूसरे की, कसी की भी अनिच्छा पर ववाह संबंध वच्छेद हो जाता है। तलाक का प्रावधान बहुत साधारण हो गया है। स्त्री और पुरुष अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व के आधार पर निर्णय लेने में स क्रय और समर्थ है। आज का परिवर्तित समाज नये जीवन मूल्यों को लेकर चलता है।

आज के समाज के युवा वर्ग का भाव बोध बदलाव के नये-नये आयामें को छू रहा है। उनकी दृष्टि स्वार्थ की है: अपने को महत्त्व देने की है; उनका दृष्टिकोण व्यक्तिवादी है। अपनी दृष्टि व्यक्तिवादी होने के कारण ही वह प्रेम- ववाह में संलग्न है। यद्य प प्रेम ववाह और कोर्ट-मैरिज ने बाह्य आडंबरों को स्थान नहीं दिया है जिससे आज की महंगाई के समय में धन का अपव्यय कम हुआ है। वहीं वधवा ववाह, अंतर्जातीय ववाह, बिलंबित ववाह ने समाज को एक नया दृष्टिकोण प्रदान कया है। जहाँ इस प्रकार के ववाहों द्वारा समाज को नई दृष्टि मली है वहीं दूसरी ओर प्रेम- ववाह की असफलताएँ, तलाक जैसी प्र क्रया समाज में वषैली गैसों की भाँति फैल रही है, जिसमें सांस लेना तो दूर निरंतर घुटन का अनुभव होता है। पति-पत्नी के प वत्र बंधन को तोड़ना कतना सरल हो गया है। उनका व्यक्तित्व स्वतंत्रता का बहुत अ धक पक्षधर हो गया है। उसके कारण वे एक दूसरे को सहन नहीं कर पाते हैं। इस सत्य पर प्रकाश डालते हुए डॉ॰ दिनेशचन्द्र वर्मा ने स्पष्ट शब्दों में अ भव्यक्त कया है -

“ ववाह के कुछ दिनों बाद ही पति पत्नी के मतभेद इतने तीव्र रूप में उभर कर आते हैं क दोनों एक दूसरे को बर्दाश्त नहीं कर पाते।”[vi]

तलाक की दर दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। ववाहित स्त्री पुरुष परस्पर एक वकृत जीवन जी रहे हैं, जिसका अहसास आज पूर्ण रूप से हो रहा है। हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं में स्त्री-पुरुष वच्छेद दिन प्रतिदिन देखने में आते हैं।

इस प्रकार ववाह पुरुष के लए मज़ाक बनता जा रहा है और नारी के लए त्रासद वडंबना और आ र्थक सामाजिक असुरक्षा का कारण।

स्वतंत्रता के पश्चात् नारी जागरण द्वारा स्त्रियों के सामने चंतन के नये नये आयाम सामने आये। इसमें तनिक भी संदेह नहीं क आज के ववाह में यौन-संबंध-रहित प्रेम तत्त्व का पूरी तरह से अभाव हो गया है। आज ववाह पूर्व संबंधों के द्वारा शारीरिक तुष्टि हो जाती है। अतः प्रेम के भाव का नितांत अभाव होता चला जा रहा है। युग की नई चेतना में इस तरह के ह्रास को यानी प्रेम के ह्रास को और यौन संबंध की वृ द्ध को अच्छी तरह

रेखां कत कया गया है। सैक्स और प्रेम पर अपना इसी तरह का दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हुए डॉ॰ प्र मला कपूर ने इस प्रकार वचार व्यक्त कए हैं -

"पहले प्रेम या तो रोमानी था या समर्पण के भाव से युक्त, कंतु अब भौतिक दृष्टि के साथ शारीरिक प्रेम की महत्ता निरंतर बढ़ती जा रही है। यौन संबंध रहित प्रेम अपना महत्त्व खोता जा रहा है।"[vii]

अतः आज ववाह के मायने पूरी तरह से बदल गये है, भारतीय मनीषी जिसे धा र्मक संस्कार मानते थे अब वह भौतिक दृष्टि पर केंद्रित हो गया है। स्त्री भी ववाह पूर्व जहाँ सुख-सु वधाओं को तोलती है वहीं पुरुष भी दहेज पर गद्ध दृष्टि रखने से बाज नहीं आते। आज ववाह का अर्थ प्रेम, त्याग, वश्वास, तपस्या न होकर भोग, वलास, सुख, शारीरिक आकर्षण मात्र रह गया है। ववाह पूर्व के प्रेम संबंधों को आज परंपरावादी दृष्टि से देखने का चलन समाप्त हो गया है। अतः ववाह से पूर्व के प्रेम संबंधों को देखकर कोई चौंकता नहीं है, उसका परिणाम शरीर के आकर्षण के साथ-साथ अनेक दूषणों से भी युक्त होता जा रहा है जिसका संकेत डॉ॰ लक्ष्मीराय ने अपने शोध प्रबंध "आधुनिक हिंदी नाटक: चरित्र सृष्टि के आयाम" में अच्छी प्रकार कया है - "फलतः स्वैरिता, परस्त्रीगमन, उन्मुक्त प्रेम तथा प्रयोगात्मक ववाह जैसी अनेक संकल्पनाएँ जन्म ले रही हैं।"[viii]

इस प्रकार संबंध की नींव उथली हो गई है जिससे शीघ्र ही संबंध वच्छेद हो जाता है। इस संबंध- वच्छेद से सर्वा धक प्रभा वत आने वाली पीढ़ी होती है अर्थात् बच्चे जिन्हें माता और पता का पूर्ण प्यार नहीं मल पाता जो निरंतर ममता के लये तरसते हैं और युवा होने पर उनके मानस में कई कुण्ठाएँ पैदा हो चुकी होती है। ववाह की असफलता से परिवार प्रभा वत होता है।

परिवार और स्त्री-पुरुष संबंध

परिवार एक प्राथ मक मौ लक समूह है और व्यक्तित्व को ढालने वाला प्राकृतिक सांचा है। परिवार व्यक्ति की प्रथम आवश्यकता है, जिसमें उसे अपनी सुरक्षा का भाव तथा अपनों से स्नेह का भाव मलता है। इसमें रहकर वह अपनी सभी इच्छाओं व भावनाओं की पूर्ति करता है। डॉ॰ वीणा गौतम के शब्दों में - "परिवार एक ऐसी इकाई है जिसमें व्यक्ति की सहज मनोवृत्तियाँ अपने घनीभूत में फलती-फूलती है।"[ix]

प्राचीन मनी षयों ने मनुष्य के जीवन को चार आश्रमों में बाँटा है जिनमें से केवल एक ही आश्रम सर्वा धक महत्त्वपूर्ण है। वह है गृहस्थाश्रम। मनु ने कहा है "जैसे सभी जीव वायु के सहारे जीते हैं वैसे ही मनुष्य गृहस्थाश्रम में जीवन धारण करते हैं।"[x]

मनुष्य प्रारंभ में वनों में घूमता था उसने अपनी यौन-पूर्ति के लए स्त्री की आवश्यकता पड़ी ज्यों-ज्यों वह सभ्य होता चला गया त्यों-त्यों उसे परिवार की आवश्यकता अनुभव हुई। समाजशास्त्र के वद्वान् बी॰ एस॰ पहा ड़या ने परिवार की वश्व व्यापकता के दो प्रमुख कारण दिये है - "प्रथम, मनुष्य व्यक्ति रूप से अपूर्ण है। और उसके अस्तित्व को बनाये रखने के लए सामूहिक जीवन परम आवश्यक है। शशु पालन और काम संबंधी क्रयाओं

© Associationof Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

पर सार्वजनिक नियंत्रण प्रत्येक समय और स्थान पर आवश्यक है। दूसरे, मनुष्य की शारीरिक रचना भी इस प्रकार की है क वह स्वतंत्र रूप से अपनी इन प्रवृत्तियों और आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकता।”[xi]

वस्तुतः मनुष्य के एकाकी जीवन को संगठित करने के लए परिवार का महान् महत्त्व है। स्त्री-पुरुष का आकर्षण-प्रेम संतानोत्पत्ति का कारण है और संतान के लालन-पालन का कार्य स्त्री पुरुष दोनों की स्वभावगत वशेषता है। यह दृष्टि परिवार को बनाने की एक मूल भत्ति कही जा सकती है। इसके वषय में मैकाइवर तथा पेज का मत है क - “परिवार लैं गक संबंधों से परिभा षत एक समूह है जो संतानोत्पत्ति व उसके पालन-पोषण में पर्याप्त सुनिश्चित एवं सहिष्णु है।”[xii]

इस संबंध में बद्धमूल धारणा है क परिवार का आधार पति-पत्नी संबंध है। उस संबंध से इतर संबंध भी जुड़ जाते हैं। जैसे पति-पत्नी के साथ बच्चे आदि। इसके पक्ष में प्रो॰ अशोक कुमार वर्मा का मत ध्यान देने योग्य है - “परिवार ववाह दंपत्ति की एक स मति है, जिसमें संतानोत्पत्ति, उसका पालन तथा प्र शक्षण होता है। यह एक ऐसी स मति है, जिसके सदस्य ववाहित दंपत्ति तथा बच्चे होते हैं। [xiii] अतः परिवार पति-पत्नी व बच्चों की स मति है।

परिवार की कल्पना करने में कुछ वद्वान यौन-संबंधों में नियम की आवश्यकता को मूल्य देते हैं। मनुष्य की कामोपभोग की प्रवृत्ति, जो क पशुओं में भी पायी जाती है उसका परिष्कार परिवार की कल्पना से हो जाता है। मनुष्य समाज के नियमों में बंधता है। इसको लक्ष्य करके डॉ॰ नरेन्द्रनाथ त्रिपाठी ने ठीक लखा है, “मानव समाज में यौन संबंध, परंपराओं एवं संस्कारों से बंधे होते हैं। ये संबंध पशु समाज की भाँति ऐच्छिक एवं मनमाने नहीं होते। संभवतः इन्हीं संबंधों को ध्यान में रखकर परिवार की कल्पना की गई थी।”[xiv]

वस्तुतः मनुष्य के एकाकी जीवन को संगठित करने के लए परिवार का महान महत्त्व है। स्त्री-पुरुष का आकर्षण-प्रेम संतान की उत्पत्ति का कारण है और संतान के लालन पालन का कार्य स्त्री-पुरुष दोनों की स्वभावगत वशेषता है। यह दृष्टि परिवार को बनाने की मूल भत्ति कही जा सकती है, कंतु हिंदू समाज के ववाह संस्कार के परिवर्तित रूप में संयुक्त परिवार के बिगड़ते स्वरूप से लेकर एकाकी परिवारों के टूटन तक का सफर निरंतर जारी है।

© Associationof Academic Researchers and Faculties (AARF)

[i] समकालीन समाज एवं संस्कृति - डॉ॰ महेन्द्रनाथ श्रीवास्तव , पृष्ठ-148

[ii] यौन व्यवहार , अनुशीलन - दयानंद वर्मा, प्राक्कथन, पृष्ठ-9

[iii] प्रजानायैगृह मे धनाम् , रघुवंश - का लदास, पृष्ठ-1/5

[iv] अ भज्ञान शाकुन्तलम् - का लदास , 7/17, पृष्ठ-370-371

[v] प्रारं भक समाज दर्शन , अशोक कुमार वर्मा, पृष्ठ-107

[vi] स्वातंत्र्योत्तर हिंदी नाटकः समस्याएँ और समाधान - डॉ॰ दिनेशचंद्र वर्मा, पृष्ठ-67

[vii] ववाहः सैक्स और प्रेम, प्र मला कपूर, पृष्ठ-177

[viii] आधुनिक हिंदी नाटकः चरित्र-सृष्टि के आयाम, डॉ॰ लक्ष्मीराय, पृष्ठ-432

[ix] आधुनिक हिंदी नाटकों में मध्यवर्गीय चेतना - डॉ॰ वीणा गौतम, पृष्ठ-50

[x] समाजशास्त्र , सतीशचंद्र अग्रवाल, पृष्ठ-243

[xi] समाजशास्त्र के सद्धांत - बी॰ एस॰ पहा ड़या , पृष्ठ-182

[xii] **The family is a group detiend by sex relationship sutticiently precise and enduring to provide for the procrecation and ubbrining of children.** द्रष्टव्य - समाजशास्त्र के सद्धांत - बी॰ एस॰ पहा ड़या, पृष्ठ-183

[xiii] प्रारं भक समाज दर्शन , प्रो॰ अशोक कुमार वर्मा, पृष्ठ-60

[xiv] साठोत्तरी नाटकों में स्त्री-पुरुष संबंध , डॉ॰ नरेन्द्रनाथ त्रिपाठी, पृष्ठ-24